Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

Original Article

भारतीय शिक्षा पर बौद्ध दर्षन का प्रभाव

डॉ. पंकज कुमार

सामाजिक विज्ञान संकाय (इतिहास), ल. ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

Email: pankajdbga@gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2026-180502
ISSN: 2230-9578
Volume 18
Issue 5(A)
Pp. 4-6
May- 2026
Submitted: 15 Apr. 2026
Revised: 25 Apr. 2026
Accepted: 10 May. 2026
Published: 31 May 2026

सारांश

शिक्षा का दर्शन एवं धर्म घनिष्ट सम्बन्ध है। भारतीय शिक्षा प्राचीनकाल से ही दार्शनिक एवं धार्मिक सिद्धान्तों से जुड़ी रही है। संसार की परिस्थितियों में आए परिवर्तन के परिणामस्वरूप दार्शनिक विचारधाराओं में भी परिवर्तन होता रहता है और इसी के अनुसार ही शिक्षा व्यवस्था भी परिवर्तित होती रहती है। सत्य तो यह है कि दर्शन का व्यावहारिक रूप शिक्षा है और शिक्षा का सैद्धान्तिक रूप दर्शन। वह दर्शन नहीं है जिसका शिक्षा पर प्रभाव न हो और वह शिक्षा, शिक्षा नहीं है, जिसकी दार्शनिक पृष्टभुमि न हो। वास्तविक दर्शन वह है जिसमें युवकों को जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण को अपनाने हेतु प्रेरित करने और सम्पूर्ण समाज को शिक्षा के उचित विचारों को ग्रहण कराने की शक्ति होती है, चाहे उस दर्शन के उद्देश्य या विशेषताएँ कुछ भी क्यों न हों। प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था दार्शनिक एवं धार्मिक सिद्धान्तों से जुड़ी रही है। राजनीति का प्रभाव शिक्षा पर वर्तमान युग में स्वतन्त्राता के उपरांत पड़ने लगा है। पिफर भी भारतीय शिक्षा प्राचीनकाल के दार्शनिक विचारों से अब भी अति घनिष्ट सम्बन्ध रखती है। वैदिक कालीन शिक्षा और बौद्ध कालीन शिक्षा का प्रभाव निरन्तर चला आ रहा है। शिक्षा शास्त्रा के सभी विषयों तथा कार्यों मे इस दार्शनिक विचारों का प्रभाव दिखलायी पड़ता है। प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक के सभी विषयों एवं पाठ्यक्रमों पर इसका प्रभाव पाया जाता है। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था एवं बौद्धकालीन शिक्षा व्यवस्था पर अलग–अलग अनेकों विस्तृत अध्ययन हुए हैं किन्तु बौद्ध दर्शन का प्राचीन भारतीय शिक्षा पर प्रभाव एवं वर्तमान शिक्षा में इसकी उपादेयता की दृष्टि से छिटपुट तथा आंशिक रूप से ही कार्य हुआ। प्राचीन भारतीय सभ्याता विश्व की सर्वाधिक रोचक तथा महत्त्वपूर्ण सभ्याताआ में एक है। इस सभ्याता के समुचित ज्ञान के लिए हमें इसकी शिक्षा पद्धाति का अध्ययन करना आवश्यक है जिसने इस सभ्यता को चार हजार वर्षों से भी अधिक समय जक सुरक्षित रखा, उसका प्रचार–प्रचार किया तथा उसमें संशोधन किया। प्राचीन भारतीयों ने शिक्षा को आत्याधिक महत्त्व प्रदान किया। भौतिक तथा आध्यात्मिक उत्थान तथा विभिन्न उत्तरदायित्वों के विधिवत निर्वाह के लिए शिक्षा की महत्ती आवश्यकता को सदैव स्वीकार किया गया। वैदिक युग से ही इसे प्रकाश का स्रोत माना गया है जो मानव–जीवन युग के विभिन्न क्षेत्रों को आलोकित करते हुए उसे सही दिशा–निर्देश देता है। प्राचीन कालीन शिक्षा का तात्पर्य उस युग से है जब यहाँ का सभ्यता अपने आदि रूप में पायी जाती रही। इतिहाकारों ने इसे पूर्व वैदिक काल कहा है जो ई0पू0 3000 वर्ष के लगभग था तदुपरांत वैदिक काल तथा उत्तर वैदिक काल आया । इसका प्रारम्भ ई0पू0 3000 वर्ष हुआ और यह काल लगभग ई0पू0 1000 वर्ष तक रहा। सुविधा के विचार से यह काल खण्ड अब वैदिक काल के नाम से पुकारा जाता है। वैदिक काल में शिक्षा की पूरी व्यवस्था थी। इस काल के लोग ज्ञान को मनुष्य का तीसरा नेत्रा कहते थे। इस काल में शिक्षा का तात्पर्य था आध्यात्मिक ज्ञान की उन्नति। शिक्षा का प्रथम उद्देश्य मुक्ति अथवा मोक्ष प्राप्त करना था। सा विद्या या विमुक्तयें तथा शिक्षा का दूसरा उद्देश्य सत्य शिव सुन्दर की प्राप्ति था। वैदिक काल में शिक्षा प्रारंभ करने और शिक्षा प्राप्त करने तथा शिक्षा समाप्त करने के लिए बहुत से संस्कारों को करना आवश्यक था। लेकिन कला का विकास न होने के कारण सारे वेद मौखिक रूप में पढ़ाये जाते थ। प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही दी जाती थी। प्राम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् विद्यार्थी अपने घर से दूर गुरू के घर पर निवास कर शिक्षा प्राप्त करता था। जिसे गुरूकुल, गुरू आश्रम, गुरू गृह की संज्ञा दी गयी थी। इस काल में गुरू शिष्य के सम्बन्ध को आध्यात्मिक कहा जा सकता है जिससे गुरू और शिष्य में एकरूपता पायी जाती थी, क्योंकि दोनों का लक्ष्य एक–केवल ज्ञान प्राप्ति था।इस प्रकार प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति के उद्देश्य उच्च–कोटि के थे। शिक्षा सम्बन्धी प्राचीन भारतीयों का दृष्टिकोण मात्रा आदर्शवादी ही नहीं, अपितु अधिकांश अंशो में व्यावहारिक भी था। यह व्यक्ति को सांसारिक जीवन की कठिनाइयों एवं समस्याओं के समाधान के लिए सर्वथा उपयुक्त बनाती थी। शिक्षा समाज–सुधार का सर्वोत्तम माध्यम थी।

भूमिका :–

भारतीय शिक्षा के इतिहास में प्राचीनकाल का तीसरा चरण ईसा से पूर्व छठी शताब्दी में आरम्भ हुआ । इसे बौद्ध काल के नाम से पुकारते हैं। वैदिक धर्म ब्राह्मण उपनिषद् धर्म के पालन करने वालों में बहुत से अवगुण, अंधविश्वास, आडम्बर, जातीय संघर्ष आदि आ गए थे इस कारण यह आवश्यक था कि समाज के सदस्यों को धर्म के मूल सिद्धान्तों के प्रति प्रबुद्ध किया जाए। इसीलिए देश में एक नए धर्म सम्प्रदाय का आरम्भ हुआ जिसे गौतम बुद्ध ने चलाया । इस धर्म के आविर्भाव, विकास एवं प्रचार के कारण भारतीय शिक्षा का भी विकास हुआ और इसे बौद्ध काल की शिक्षा प्रणाली नाम दिया। बौद्ध शिक्षण–पद्धति का आरम्भ स्वयं गौतम बुद्ध ने किया था, जिसमें सरल और सुबोद्ध जनभाषा में जीवन के तत्त्वों की चर्चा की। व्याख्यान और प्रश्नोत्तर के आधार पर विचारों का आख्यान किया गया था। बौद्ध शिक्षा पद्धति मे सत्य, दार्शनिक तथ्य, तर्क, पर्यवेक्षण, मनन आदि पर अधिक बल दिया गया। फिर दिल्ली सुल्तान इब्राहिम शाह की सहायता से मुसलिम आक्रमणकारी मलिक असलान को शिकस्त देकर स्वतंत्रता हासिल की मिथिला ने, लेकिन उठा–पटक का दौर अभी समाप्त नहीं हुआ था। इस काल की शिक्षा में भी वैदिक शिक्षा के समान ही शिक्षा को आध्यात्मिक उपलब्धियों का साधन माना गया था गौतम बुद्ध ने संसार के समस्त दुःखों का मूल कारण अविद्या व अज्ञान को ही माना। शिक्षा द्वारा सच्चा ज्ञान प्राप्त होने पर ही मनुष्य को दुःखों से छुटकारा मिल सकता है। बौद्ध काल में शिक्षा का संगठन प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक किया गया था।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
डॉ. पंकज कुमार सामाजिक विज्ञान संकाय (इतिहास) ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

How to cite this article:
कुमार, पंकज. (2026). भारतीय शिक्षा पर बौद्ध दर्षन का प्रभाव. Journal of research & development, 18(5(A)), 4–6. https://doi.org/10.5281/zenodo.20841121

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.20841121
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

सुसंगठित, विशाल तथा विश्व प्रसिद्ध शिक्षा केंद्र बौद्ध शिक्षा की सबसे बड़ी विशेषता थी। भारत के इतिहास में ऐसे शिक्षा केंद्र न तो पहले कभी थे और न बाद में कभी विकसित हो सके। इस मठों में उच्च शिक्षा प्रदान करने की कुशलता के कारण भारत के अंतर्राष्ट्रीय स्तर को ऊँचा उठाया और कोरिया, चीन तिब्बत और जावा जैसे दूरस्थ देशों से विद्यार्थियों को आकर्षित किया।बौद्ध शिक्षा मठों में प्रशासन के लिए प्राचार्य, शैक्षणिक और प्रशासनिक समितियों तथा विभागाध्यक्ष की व्यवस्था आधुनिक विश्वविद्यालयों के समान ही थी। राजा तथा समाज बौद्ध बिहार का व्यय भार वहन करते थे, किन्तु आन्तरिक व्यवस्था में कोई हस्तक्षेप नहीं करते थे। बिहारों में शिक्षण और आवास के लिए विशाल भवन व व्यवस्थित छात्रावास थे। बौद्ध बिहारों में जनतांत्रिक व्यवस्था में विद्यार्थी को व्यक्तित्व के विकास के पूर्ण अवसर दिए जाते थे। यह व्यवस्था आज के जनतांत्रिक युग के लिए आदर्श है। बौद्ध बिहार में प्रवेश के लिए जाति–पाति, ऊँच–नीच का बन्धन न होने के कारण अवसरों की समानता के सिद्धान्त का पालन होता था। बौद्ध शिक्षा की एक विशेष उपलब्धि पुस्तकालय थे। इसमें प्रत्येक भाषा और प्रत्येक विषय की उच्चतम ज्ञान की पुस्तकें संग्रहित थीं। इनमें पुस्तको के संरक्षण, नवीन पुस्तकों को प्राप्त करने तथा प्रतिलितियाँ तैयार कराने की उत्तम व्यवस्था थी।

वर्तमान युग में विश्व के अनेक भागों में विचारशील चिन्तक, दार्शनिक शिक्षाशास्त्री तथा समाजशास्त्री ने गौतम बुद्ध के संदेशों की वर्तमान संदर्भ में समीक्षा करते हुए उन्हें विज्ञान के इस नाभिकीय युग में सृष्टि के प्रत्येक वाणी के लिए विशेषकर मनुष्यों के लिए अत्यन्त आवश्यक अतिवार्य और उपयोगी माना है। वर्तमान समस्त विश्व हिंसावाद, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रावाद, जातिवाद, आतंकवाद और मानव–मानव के बीच परस्पर बढ़ते वैमनस्य की स्थिति ने एक ऐसे कगार पर लाकर खड़ा किया है, जहाँ पर ऐसा लगता है कि समस्त मानव सभ्यता कहीं विलीन न हो जाये और मानव सभ्यता के विलीन होने के साथ ही जड़–चेतन प्राणी के अस्तित्व का भी खतरा उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। विश्व में शायद ही कोई ऐसा राष्ट्र हो जो आतंकवाद, सम्प्रदायवाद, जातिवाद और क्षेत्रावाद से प्रभावित न हो। चाहे ये भारतीय उपमहाद्वीप हों, एशिया के अरब राष्ट्र हों, अथवा अमेरिका व रूस जैसे बड़े राष्ट्र भी इस वर्तमान समय में आतंकवादी हिंसा के महादानव से त्रास्त हैं।

आज मानव सिपर्फ अपने में ही खोकर रह गया है। अपने स्वार्थ के आगे न तो देश की चिंता है और न ही समाज और अपने परिवार की। ऐसी स्थिति में यह मानव, मानव समाज के लिए कैसे सोच सकता है जहाँ उसका स्वार्थ ही प्रधान है। निश्चय ही ऐसी स्थितियों में कुछ ऐसे कटट्रवादी साम्प्रदायिक समूहों का संगठन बनेगा जो अपने स्वार्थ के लिए निर्दोष मानव जाति का विनाश करने में कतई सकोच नहीं करेंगे। एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय के विनाश पर गर्व का अनुभव करेगें और उसे धर्मयुद्ध का नाम देंगे। इसका परिणाम क्या होगा? वे स्वयं भी नहीं जानते। क्या मानव सभ्यता जो वर्तमान में 21वीं सदी के वैज्ञातिक युग में चल रही है, इसका अन्त इस अज्ञानता रूपी हिंसा से ही हो। इस प्रश्न का उत्तर क्या होगा? इसका उत्तर पाने के लिए सभी शिक्षा शास्त्री, दार्शनिक एवं राष्ट्राध्यक्ष परेशान हैं। हिंसा का अन्त हिंसा से नहीं किया जा सकता है। यदि हिंसा का अन्त हिंसा से किया जाएगा तो कुछ भी शेष नहीं बचेगा। आधुनिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन की विकृति का मुख्य कारण यह है कि हमने साक्षरता का प्रतिशत तो बढ़ाया है, पर हम यह दावा नहीं कर सकते हैं कि हमने साक्षर समूह को सुशिक्षित किया है। शिक्षा वह है जो मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है, उसे सामाजिक जीवन जीने की कला में पारंगत करती है, उसे स्व की परिधि से लिकाल कर पर–परिधि में प्रतिष्ठित करती है। इसीलिए प्राचीन शिक्षा में शिक्षार्थी को सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, आदि मूल्यों को आत्मासात करने के लिए प्रेरित किया जाता था। परम्परागत प्राचीन भारतीय शिक्षा मे जहाँ एक ओर यह उच्च आदश प्रतिपादित है, वहीं दूसरी ओर आधुनिक भारतीय शिक्षा इससे पूर्णतः हो चुकी है। इसमें व्यक्तित्व एवं चरित्रा के विकास की संकल्पना दब गई है, जीवन मूल्य मर गए हैं। सदाचारी बनना, क्षमाशील बनना दीन दुखियों के प्रति दया प्रदर्शित करना, समदर्शी बनना आदि अब भारतीय शिक्षा के लक्ष्य नहीं हैं। वर्तमान में शिक्षा का लक्ष्य भौतिकवादी बन कर रह गया है।

आधुनिक शिक्षा में मूल्यों का अभाव सचमुच ही चिन्ता का विषय है। मनुष्य के कला पक्ष का वैवभ तो बढ़ा है पर भाव पक्ष ओझल है। ऐसी स्थिति में हमें अपने गौरवशाली भारतीय शिक्षा एवं संस्कृति के उद्देश्यों एवं तत्कालीन महान सन्तों के संदेशों की तरपफ देखना होगा जिन्होंने सिपर्फ मानव जाति के कल्याण के लिए हर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। उन समस्त सन्तों एवं दार्शनिकों में वर्तमान समय में गौतम बुद्ध के विचार ,उनके दर्शन, उनका आलोक में मानव जाति के शत्रुओं का विनाश बिना किसी हिंसा के किया जा सकता है। गौतम बुद्ध की वाणी 544 ई0पू0 जितनी प्रासंगिक थी उससे कहीं अधिक इसकी प्रासंगिकता वर्तमान समय में हो गयी है क्योंकि वर्तमान समय मानव सभ्यता के अनिश्चितता का समय प्रतीत होता है, उसकी सुरक्षा का एक मात्रा रास्ता गौतम बुद्ध की अमृतवाणी है। यदि मानव समाज गौतम द्ध की इस अमृतवाणी का एक अणु मात्रा भी अनुसरण कर ले तो वह अपनी मानव सभ्यता का उत्थान, उसकी सम्पन्नता का विकास अवश्य कर सकता हैं। कभी–कभी हताश पैदा हो जाती है जो देश गौतम बुद्ध को भुला चुका है, वह पुनः उनके संदेशों का क्या कभी पालन करेगा? जिनके हाथों में सत्ता आयी या आयेगी, वे बड़े संशय के साथ संदेशों को देखेंगे और उनकी शिक्षा एवं जीवन–दृष्टि सम्बन्धी विचारधारा की स्पष्टता, मानव की संशय–भ्रमित मरूस्थल में गयी–सी लगेगी। उन पर पुनः लौटना शायद आज के बेचैन और तनाव ग्रसित समाज के लिए असंभव ही लगता है। विश्व सभ्यता को धर्म,संस्कृति एवं शिक्षा के क्षेत्रा में भारत न जो महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है उसमें बौद्ध धर्म एवं उससे सम्बन्धित संस्कृति सर्वोत्कृष्ट है। वैदिक धर्म भारत की सीमाओं तक ही सीमित रहा जबकि बौद्ध धर्म जापान, चीन,तिब्बत, श्रीलंका, सुमात्राा, जावा आदि विभिन्न देशों में प्राचीन काल से अब तक जीवन क हर क्षेत्रा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। वैदिक शिक्षा पद्धति जहाँ वर्ग विशेष तक ही सीमित थी, बौद्ध शिक्षा पद्धति में वर्ग एवं जाति के किसी भी भेद को स्वीकर नहीं किया । महिलाओं को भी पुरूषों के समान शिक्षा का अधिकार प्रदान किया गया। शिक्षा को जनसामान्य तक पहुंचाने के लिए गौतम बुद्ध ने वर्ग विशेष की भाषा संस्कृत का ही प्रयोग ने करके पाली भाषा का प्रयोग किया। शिक्षा के इतिहास में पहली बार बड़े–बड़े विश्वविद्यालयों की स्थापना की गयी जिसमें हजारों छात्रा एवं अध्यापक साथ–साथ रहते हुए ज्ञान के प्रचार–प्रसार में जुटे रहे।

यह सर्वविदित है कि आधुतिक भारतीय शिक्ष का गठन ब्रिटिश काल में पाश्चात्य शिक्षा के अनुकरण पर हुआ था। इसका मूल उद्देश्य शासक वर्ग के लिए नौकर तैयार करना था। स्वतन्त्रा भारत में भी के माध्यम से नौकरशाही के सृजन पर विशेष बल दिया गया। 70–80 के दशकों से भारत में व्यावसायिक या रोजगारपरक शिक्षा के विचार को विशेषतः प्रचारित–प्रसारित किया गया। तात्पर्य यह है कि शिक्षा या तो नौकरी या व्यवसाय पैद करने का साधन है। आज के बदलते हुये परिवेश में शिक्षा मे मूल उद्देश्य व्यक्तित्व का विकास एवं चरित्र तिर्माण पूर्णतः उपेक्षित हो गए हैं। इस शिक्षा से एक अच्छा नौकरशाह, कुशल वैज्ञानिक या सपफल व्यवसायी तो मिल सकता है, पर एक अच्छे मानव का सृजन असंभव है।

प्राचीनकाल के अन्य धर्मोपदेशकों की तरह गौतम बुद्ध ने भी अपने धर्म का प्रचार मौखिक रू' से ही किया। उनके शिष्यों ने भी बहुत काल तक उनके उपदेशों का मौखिक ही प्रचार किया। बुद्ध के निजी उपदेशों का जो कुछ भी ज्ञान हमें आजकल प्राप्त है, वह त्रिपिटकों से ही हुआ है। कहा जाता है कि गौतम बुद्ध के वचनों और उपदेशों का संकलन उनके शिष्यों द्वरा त्रिपिटकों में ही किया गया । रोग, जरा तथा मरण के दुःखमय दृश्यों को देखकर सिद्धार्थ का मन विकल हो गया था, किन्तु जब सिद्धार्थ बुद्ध हुये तो वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि मानव तथा मानवेतर जीवन सभी दुःखों से परिपूर्ण है। जन्म, जरा, रोग, मृत्यु, शोक, क्लेश, आकांक्षा, नैराश्य सभी आसक्ति से उत्पन्न होते हैं अतः ये सभी दुःख हैं। क्षणिक विषयों के लिए आसक्ति ही पुनर्जन्म तथा बन्धन का कारण होती है। सांसारिक सुखों को यथार्थ सुख समझना अदूरदर्शिता है। सांसरिक सुख वास्वविक नहीं हैं। वे क्षणिक होते हैं। उनके नष्ट हो जाने पर दुःख ही होता है। ऐसे सुखों के साथ बराबर चिन्ता लगी रहती है कि कहीं वे नष्ट न हो जायें। बौद्ध काल मे शिक्षा का संगठन प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा के रूप मे पृथक–पृथक किया जाता था। प्राथमिक शिक्षा 8 वर्ष की अवस्था से पबज्जा संस्कार के बाद प्रारम्भ होती थी और 12 वर्ष तक चलती थी। उच्च शिक्षा 20 वर्ष की अवस्था उपसम्पदा संस्कार के पश्चात् प्रारम्भ होती थी और जीवन भर चलती थी बाद में जीवन भर का बंधन समाप्त हो गया था। बौद्ध काल में मुख्य शिक्षा संस्था बिहार होते थे। बौद्ध संघ के अंतर्गत अनेक मठ एवं बिहार होते थे। सर्वजनोपयोगी तथा अतिसरल होने के कारण बौद्ध दर्शन प्रारम्भ से ही विविध विद्वानों के अध्ययन अनुशीलन का विषय राह है। इस विद्वानों न बौद्ध शिक्षाओं के जिस पक्ष के विधिवत विवेचन का प्रयास कियर है, वह है उसका सैद्धान्तिक–वैचारिक अथवा दार्शनिक पक्ष। व्यावहारिक या सामाजिक पक्ष है। वस्तुतः यह वही पक्ष है जिसमें बौद्ध दर्शन अन्य दर्शनों से सर्वथा पृथक् एवं विरल है। प्रसिद्ध विचारकों एवं दार्शनिकों की कृतियों में वैचारिक या दार्शनिक पक्ष के समक्ष इस पक्ष का स्थान प्रायः नगण्य रहा हैं अतः यह अनुभव किया गया है कि इस पक्ष के सम्यक् उद्घाटन की महती आवश्यकता है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

निष्कर्ष :–

बौद्ध दर्शन बहुलांश में अपनी समकालीन परिथितियों का उत्पाद है। इसमें उन सामाजिक–धार्मिक समस्याओं का उत्तर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है जो तत्कालीन जनमानस को आन्दोलित की हुई थी। इसमें नैतिक जीवन की अभ्युन्नति एवं चारित्रिक विकास के लिए नैतिक शिक्षाओं पर विशेष बल दिया गया है। वस्तुतः आध्यात्मिक लक्ष्य की गति के लिए बौद्ध दृष्टि में शील अथवा सदाचार प्रथम स्तम्भ है। जातिगत श्रेष्ठता के विचार पर आधारित ऊँच–नीच के सामाजिक विभेद के स्थान पर कर्मगत श्रेष्ठता को प्रतिष्ठित करना, बौद्ध संघ के आदर्श के द्वारा समतामूलक समाज को दृष्टि देना, तृष्णा को सकल दुःखों की जननी मानना, मानव व्यक्तिगत की बाह्म एवं आन्तरिक परिशुद्धि के द्वारा आदर्श चरित्रा का प्रतिमान उपस्थित करना, विचारों को अन्धविश्वासों से निकालकर ज्ञान एवं तर्क की कसौटी पर कसकर देखना, ज्ञान के साथ–साथ करुणा को व्यावहारिक जीवन का संबल बानाना, धार्मिक जीवन में कर्मकाण्ड, हिंसा आदि की प्रवृत्तियों का प्रबल विरोध करना, स्त्रियों को पुरूषों की भाँति समानता का स्थान देना, लोकभाषा के महत्व की स्वीकृति आदि अनेक ऐसे विचार हैं जिन्होंने बौद्ध दर्शन को सामाजिक जीवन की व्यवहार भूमि पर खड़ा किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आधार ग्रंथ :– अंगुत्तर निकाय सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी, संस्करण 1958, सम्पादिक रिचर्ड मोरिस और एण्डमण्ड हार्डी, पालि टेक्स्ट सोसायटी लन्दन,1885, 1900
2. कथावस्तु :– सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा, देवनागरी संस्करण, 1961
3. जातक :– सम्पादिक, पफाउसबौल्ल, ट्रबनर एण्ड कं. लि. लंदन, 1877–96
4. चुल्लवग्ग :– सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी संस्करण,1956
5. थेरगाथा :– सम्पादक, एच. ओल्डेनवर्ग, पालि सोसायटी, लन्दन 1833, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1959
6. थेरीगाथा :– सम्पादक, आर. पिशेल, पालि सोसायटी, लन्दन 1833, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1959
7. दीघनिकाय :– सम्पादक, टी. डब्ल्यू, रीज रेविड्स और जे. इकारपेंटर, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लंदन, 1890–1911, सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा, देवनागरी संस्करण, 1958 हिन्दी अनुवाद राहुल सांकृत्यायन, महाबोधि, सारनाथ, 1936
8. दीपवंश :– सम्पादक, ओल्डेनबर्ग, लन्दन, 1879
9. धम्मपद :– सम्पादक एस. एस. थेर, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, 1914 अंग्रेजी अनुवाद, एपफ. मेक्समूलर, सेक्रेड कुक्स ऑपफ दी ईस्ट, जिल्द 10,भारतीय संस्करणद्ध दिल्ली 1965